2020 में मनाएँ खादी शताब्दी वर्ष

गांधी जी ने 1920 के दशक में गाँवों को
आत्म निर्भर बनाने के लिये
खादी के प्रचार-प्रसार पर बहुत जोर दिया था ।
जरा सोचें कि हम विज़न 2020 में शामिल कर
उसी खादी को एक नई पहचान देकर
बापू की उस देशभक्ति से परिपूर्ण मुहिम को
शताब्दी वर्ष के रूप में
सन 2020 में धूमधाम से नहीं मना सकते ?

यह वास्तव में उत्साहवर्धक है कि माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने आज कहा कि खादी के जरिये भारतवासियो को स्वाबलंबी बनाने के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सपने को उनकी सरकार आगे बढ़ा रही है और विभिन्न सरकारी संस्थान आगे बढ़कर खादी के उत्पादों का उपयोग कर रहे हैं। दरअसल, मुझे लगता है कि सिरे से लोगों तक पहुंचे ये उद्गार खादी को लेकर बापू की सोच की व्यापकता को स्वर देने की नई पहल के समान है।

बहरहाल, खादी पर गांधी जी के दृष्टिकोण में निहित और सूत के एक-एक धागे के साथ जुड़ी स्वाधीनता, संवेदना, आत्म सम्मान की भावना को समझना आज भी समझदारी की बात है। वह आज भी प्रासंगिक है। उन्होंने चरखे के चक्र में कल की गति के साथ ताल मेल करने और उससे होड़ लेने की भी अनोखी शक्ति को गहराई से देख लिया था। खादी के जन्म की कहानी भी काम रोचक नहीं है।

अपनी आत्म कथा में बापू लिखते हैं कि मुझे याद नहीं पड़ता कि सन् 1915 मे मै दक्षिण अफ्रीका से हिन्दुस्तान वापस आया , तब भी मैने चरखे के दर्शन नही किये थे। कोठियावाड़ और पालनपूर से करधा मिला और एक सिखाने वाला आया । उसने अपना पूरा हुनर नही बताया । परन्तु मगनलाल गाँधी शुरू किये हुए काम को जल्दी छोडनेवाले न थे । उनके हाथ मे कारीगरी तो थी ही । इसलिए उन्होने बुनने की कला पूरी तरह समझ ली और फिर आश्रम मे एक के बाद एक नये-नये बुनने वाले तैयार हुए ।

आगे गांधी जी लिखते हैं कि हमे तो अब अपने कपड़े तैयार करके पहनने थे । इसलिए आश्रमवासियो ने मिल के कपड़े पहनना बन्द किया और यह निश्यच किया कि वे हाथ-करधे पर देशी मिल के सूत का बुना हुआ कपड़ा पहनेगे । ऐसा करने से हमे बहुत कुछ सीखने को मिला । हिन्दुस्तान के बुनकरों के जीवन

की, उनकी आमदनी की, सूत प्राप्त करने मे होने वाली उनकी कठिनाई की, इसमे वे किस प्रकार ठगे जाते थे और आखिर किस प्रकार दिन-दिन कर्जदार होते जाते थे, इस सबकी जानकारी हमे मिली । हम स्वयं अपना सब कपड़ा तुरन्त बुन सके, ऐसी स्थिति तो थी ही नही। कारण से बाहर के बुनकरों से हमे अपनी आवश्यकता का कपड़ा बुनवा लेना पडता था। देशी मिल के सूत का हाथ से बुना कपड़ा झट मिलता नही था । बुनकर सारा अच्छा कपड़ा विलायती सूत का ही बुनते थे , क्योकि हमारी मिलें सूत कातती नहीं थी । आज भी वे महीन सूत अपेक्षाकृत कम ही कातती है , बहुत महीन तो कात ही नही सकती । बडे प्रयत्न के बाद कुछ बुनकर हाथ लगे , जिन्होने देशी सूत का कपडा बुन देने की मेहरबानी की ।

इन बुनकरों को आश्रम की तरफ से यह गारंटी देनी पड़ी थी कि देशी सूत का बुना हुआ कपड़ा खरीद लिया जायेगा । इस प्रकार विशेष रूप से तैयार कराया हुआ कपड़ा बुनवाकर हमने पहना और मित्रो मे उसका प्रचार किया । यों हम कातने वाली मिलों के अवैतनिक एजेंट बने । मिलो के सम्पर्क मे आने पर उनकी व्यवस्था की और उनकी लाचारी की जानकारी हमे मिली । हमने देखा कि मीलों का ध्येय खुद कातकर खुद ही बुनना था । वे हाथ-करधे की सहायता स्वेच्छा से नही , बल्कि अनिच्छा से करती था । यह सब देखकर हम हाथ से कातने के लिए अधीर हो उठे। हमने देखा कि जब तक हाथ से कातेगे नही, तब तक हमारी पराधीनता बनी रहेगी । मीलों के एजेंट बनकर देश सेवा करते है , ऐसा हमे प्रतीत नहीं हुआ ।

लेकिन गांधी जी के अनुसार न तो कही चरखा मिलता था और न कही चरखे का चलाने वाला मिलता था । कुकड़ियाँ आदि भरने के चरखे तो हमारे पास थे, पर उन पर काता जा सकता है इसका तो हमे ख्याल ही नही था । एक बार कालीदास वकील एक वकील एक बहन को खोजकर लाये । उन्होने कहा कि यह बहन सूत कातकर दिखायेगी । उसके पास एक आश्रमवासी को भेजा , जो इस विषय मे कुछ बता सकता था, मै पूछताछ किया करता था । पर कातने का इजारा तो स्त्री का ही था । अतएव ओने-कोने मे पड़ा हुई कातना जानने वाली स्त्री तो किसी स्त्री को ही मिल सकती थी।

बापू स्पष्ट करते हैं कि सन् 1917 मे मेरे गुजराती मित्र मुझे भरुच शिक्षा परिषद मे घसीट ले गये थे । वहाँ महा साहसी विधवा बहन गंगाबाई मुझे मिली । वे पढी-लिखी अधिक नही थी , पर उनमे हिम्मत और समझदारी साधारणतया जितनी शिक्षित बहनो मे होती है उससे अधिक थी । उन्होंने अपने जीवन मे अस्पृश्यता की जड़ काट डाली थी, वे बेधड़क अंत्यजों मे मिलती थीं और उनकी सेवा करती थी । उनके पास पैसा था , पर उनकी अपनी आवश्यकताएँ बहुत कम थीं । उनका शरीर कसा हुआ था । और चाहे जहाँ अकेले जाने में उन्हें जरा भी झिझक नहीं होती थी । वे घोड़े की सवारी के लिए भी तैयार रहती थी । इन बहन का विशेष परिचय गोधरा की परिषद मे प्राप्त हुआ । अपना दुख मैंने उनके सामने रखा और दमयंती जिस प्रकार नल की खोज मे भटकी थी, उसी प्रकार चरखे की खोज मे भटकने की प्रतिज्ञा करके उन्होंने मेरा बोझ हलका कर दिया ।

खादी के धागे धागे में
अपनेपन का अभिमान भरा,
माता का इसमें मान भरा
अन्यायी का अपमान भरा।

खादी के रेशे-रेशे में
अपने भाई का प्यार भरा,
माँ-बहनों का सत्कार भरा
बच्चों का मधुर दुलार भरा।

कवि सोहनलाल द्विवेदी की उक्त पंक्तियाँ खादी के विषय में बड़ी मर्म की बात कह देती हैं।